जनाज़े का फूल

असलम के चेहरे से आँखें हटाकर भाभी खिड़की से बाहर अँधेरे में देखने लगीं। पर्दे को हिलाती हुई बाहर की भीगी, ठण्डी बरसाती हवा आकर कमरे में फैल गयी। मेज़ पर रखे लैम्प की लौ एक बार सिहरकर हिल उठी। कमरे में फैला रोशनी का दायरा एक बार सिमटकर फैला और फैलकर सिमट गया। मसहरी की नाज़ुक और महीन जाली एक बार काँपी और थम गयी। भाभी का महीन दुपट्टा सिर से सरका कि असलम ने आगे झुककर, कुहनियाँ घुटनों पर टिका, अपनी हथेलियों के बीच में ठोड़ी रखकर कहा, "फिर, भाभी ?"

*

इम्तिहान के दिनों में ही असलम को रहमान भाई का खत मिला। उसके खत न लिखने की शिकायत करते हुए रहमान भाई ने खबर दी कि उनकी शादी फलाँ की लड़की से फलाँ तारीख को फलाँ शहर में होने जा रही है, इसलिए असलम खत देखते ही चला आये। आगे उन्होंने अपनी मजबूरी बतायी थी कि क्यों उन्हें न चाहते हुए भी

शादी करनी पड़ रही है, हालाँकि शादी के लिए कम-से-कम अभी तो वे बिलकुल ही तैयार नहीं थे। उनसे अब पाँच-छै साल का बच्चा सम्हलता नहीं, उसकी पूरी देख-रेख वे कर नहीं सकते, क्योंकि उन्हें जंगल-जंगल भटकना पड़ता है। सब लोग एक स्वर से कहने लगे थे कि मरने वाले के साथ मरा तो नहीं जा सकता, रहमान को अपने लिए नहीं तो कम-से-कम बच्चे के लिए सोचना चाहिए।....आखिर में उन्होंने बार-बार आग्रह किया था कि जैसे भी हो असलम का पहुँचना ज़रूरी है और वे कोई भी बहाना न सुनेंगे।

रहमान भाई असलम के दूर के रिश्ते के मामूज़ाद भाई होते थे। पर चूँकि अब उनका सिवाय असलम के घराने के और कोई नहीं रह गया था, वे असलम के नज़दीकी रिश्तेदारों से भी ज़्यादा हमदर्द और अपने हो गये थे। शादी की बात सुनकर असलम को अच्छा ही लगा। रहमान की पहली बीवी एक साल पहले मर गयी तो असलम के लिए भी भाभी का स्थान रिक्त हो गया। भाभी असलम को बहुत चाहती थीं और असलम भी उन्हें पाकर कम प्रसन्न नहीं था, हालाँकि असलम के ख़याल में जैसी भाभी होनी चाहिए थी, वैसी वह न थीं, उनसे भावुक असलम की कोई उम्मीदें पूरी न हुई थीं। इसलिए नयी भाभी के आने की बात सुनकर उसे अच्छा ही लगा। उस दिन बड़ी रात गये तक असलम नयी भाभी के विषय में सोचता रहा, उसके चेहरे के नक़्शे अपने ज़ेहन में उतारता रहा कि वह उनसे मिलकर क्या कहेगा, कैसी बातें करेगा और कैसी चुटकियाँ लेगा, आदि।....पर कमबख़्त इम्तिहान की वजह से असलम जा न सका। उसने चिढ़कर मन-ही-मन इम्तिहान को कोसा और रहमान भाई को भी कोसने से न रह सका, जिन्होंने इम्तिहान के दिनों में ही अपनी शादी रखी।

इम्तिहान के बाद असलम तुरन्त चल पड़ा, एक नयी उमंग लिये

वह घर पहुँचा तो छोटी बहन नजमा ने शादी की सारी बातें बतायीं कि बारात में कितने लोग थे, रहमान भाई ने घोड़े पर बारात निकालने से क्यों इन्कार कर दिया और मोटर में बारात निकली तो कैसी लगी। रज़िया ने कितने सुहागगीत गाये, शमसुन बाजी ने कौन-सा ग़रारा पहना था और कैसा अलगा डाल रखा था और उसे देखकर कौन जला और किसने क्या कहा। रहमान भाई ने किसे-किसे साड़ियाँ दीं और नजमा ने अपनी सब्ज़ रंग की साड़ी के लिए कौन-सा ब्लाउज़ छाँटा। असलम यह सब न चाहते हुए भी सुनता रहा कि शायद नजमा भाभी के विषय में कुछ कहेगी, पर रज़िया, सुलताना और शमसुन बाजी की बातें बढ़ती देख, ऊबकर उसने पूछा, "भाभी कैसी हैं, नजमा?"

नजमा ने पूरे सन्तोष के साथ बताया कि कितनी अच्छी हैं, कैसी बातें करती हैं, रंग कितना गोरा है, हँसी कितनी दिलकश है और स्वभाव कितना मिलनसार है।....

दूसरे दिन सुबह-ही-सुबह असलम ने रहमान भाई को खबर भिजवा दी कि वह भाभी का देखने आ रहा है। थोड़ी देर बाद ही रहमान भाई स्वयं असलम को लेने आ गये। हाथों में मेंहदी के निशान, उँगली में नयी निकाही अँगूठी और पाँवों में चरमराता पम्प-शू पहने रहमान जब असलम के कमरे में आ बैठे तो असलम ने आगे बढ़कर काफ़ी ज़ोरों से हाथ मिलाया। रहमान ने हँसते हुए असलम के काँधों पर हाथ रखकर पूछा, "कैसे हो, असलम?"

"जी अच्छा हूँ, आप कैसे हैं, भाई साहब?"

"मैं तो काफ़ी खुश हूँ, असलम!"

असलम ने जल्दी-जल्दी बालों में कंघी फेरी, पाँवों में चप्पलें डालीं और रहमान भाई के साथ निकल पड़ा। रास्ते में असलम के बग़ैर पूछे ही रहमान भाई ने भाभी के विषय में सब-कुछ बता डाला

कि वे शादी करके कितने खुश हैं। भला उन्होंने इतनी अच्छी लड़की की कहाँ उम्मीद की थी! जैसा खानदान वैसी लड़की। स्वभाव कितना अच्छा है! सीने-पिरोने में उसे कितनी महारत हासिल है, किताबों से उसे कितनी मुहब्बत है और आते ही उसने कौन-कौन-से रिसाले मँगा डाले। असलम इस बीच अपने मन में भाभी के चेहरे का नक्श खींचता रहा।

घर पहुँचकर असलम ने जब भाभी के कमरे की ओर क़दम उठाया तो उसके दरवाज़े पर टँगा नीला पर्दा हिला और पीछे से कोई फुर्ती से हट गया। असलम झिझका तो रहमान ने उसका हाथ पकड़कर कहा, "चलो असलम, शरमाते क्यों हो?" और रहमान भाई लगभग उसे खींचते-से कमरे के अन्दर ले गये।

रहमान भाई का वह कमरा आज कुछ और ही बना हुआ था। एक ओर पलंग लगा था जिस पर श्वेत-उजली चादर बिछी थी। उसके बाज़ू में एक तिपाई रखी थी। पास ही एक मेज़ थी, जिस पर खूबसूरत मेज़पोश पड़ा था, और उस पर कुछ नये-पुराने उर्दू के रिसाले और किताबें रखी थीं। दीवारों पर कुछ तस्वीरें लगी थीं। हर चीज़ क़रीने से सजी थी।

रहमान भाई ने पलंग पर बैठते हुए कहा, "असलम, यह हमारा अपना कमरा है।"

और असलम की आँखें फैल गयीं, यह रहमान भाई का कमरा है! तस्वीरें, कुर्सी, मेज़, रिसाले और किताबें—रहमान भाई को यह अचानक रिसालों और किताबों से कब दिलचस्पी हो गयी। उन्हें उर्दू नहीं आती। पहले इस कमरे के दरवाज़ों में पर्दे नहीं थे। खिड़कियाँ बन्द रहती थीं, दीवारें मैली और नंगी, कहीं कोई तस्वीर नहीं। मेज़ और कुर्सियों की उन्हें कोई आवश्यकता नहीं थी। पलंग की जगह बाध की

चारपाई, मेज़ की जगह चावल-दाल के पीपे और कुर्सियों की जगह नौकरानी शाम को बड़ी टोकनियों में मुर्गियाँ ढँक देती थी।

असलम मेज़ पर के रिसाले उलटने लगा। नये-पुराने रिसाले। रंग-बिरंगे कवर। नज़्में। ग़ज़लें। रंगीन अफ़साने और दर्दीले गीत। एक कोरी कापी में अँग्रेज़ी के अक्षर, आगे के पृष्ठों में कुछ अँग्रेज़ी के शब्द और टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखने की कोशिश। पर उसके बाद अँग्रेज़ी रुक गयी थी और उर्दू के इधर-उधर के शेर लिखे हुए थे। एक शेर पर असलम की निगाह पड़ी, जो कई जगह लिखा गया था, कापी के अगले-पिछले पृष्ठों पर, बीच के कोरे कागज़ों पर, पुराने रिसालों के कवर पर और पलंग के बगल वाली दीवार पर :

मेरी ज़िन्दगी भी कोई ज़िन्दगी है,
न पहले से दिन हैं न कोई खुशी है !

रहमान भाई ने हँसकर कहा, "लो भाई असलम, तुम तो आकर शरमा गये। ख़बर तो बड़ी लम्बी भिजवायी थी कि नयी भाभी को देखने आ रहे हो...."

असलम सिर झुकाकर हँसने लगा। फिर बोला, "भाई साहब, भाभी से हमारा आदाब कह दें।"

रहमान ने कहा, "वाह, अब तुम्हारा पैग़ाम मैं लेकर जाऊँ ? न भई, अगर तुम नहीं जा सकते तो मैं उन्हें ही भेजता हूँ। जो भी कहना-सुनना हो, कहो-सुनो !"

रहमान भाई उठकर चले गये। अन्दर वाले कमरे से उनकी हँस-हँसकर बोलने की आवाज़ आ रही थी। थोड़ी देर के बाद रहमान भाई ने आकर पलंग के पास ही एक चटाई बिछा दी और नौकरानी से दस्तरख़ान मँगवाकर कहा, "आज सुबह का नाश्ता तो नयी भाभी के हाथ का करो !"

असलम मुस्कराकर चटाई पर बैठ गया। दस्तरखान बिछा। चीनी की सफ़ेद प्लेटें आयीं और नीचे सिर किये असलम ने देखा, साड़ी की हल्की-सी सरसराहट हुई, एक बड़ी नाज़ुक और मनमोहक खुशबू आयी, चूड़ियों की सुकुमार-सी खनक हुई और एक बहुत ही गोरा-मांसल हाथ काँच की एक तश्तरी लिये उसके आगे रुक गया और सहसा असलम का हृदय धड़कने लगा। भाभी की कलाई कितनी गोरी और कितनी खूबसूरत थी! उसमें हरी-हरी सुहाग की चूड़ियाँ थीं। असलम के जी में आया कि वह अपना सिर उठाकर भाभी को देख ले, पर उसका जी धड़कता रहा और साहस करने पर भी वह आँखें न उठा सका और जब तक वह देखने के विषय में सोचे कि भाभी के हाथ हटे और वे चली गयीं।

असलम को मीठी चीज़ें पसन्द नहीं, वह चाहने पर भी खा नहीं सकता, अतः मीठी चीज़ के बदले कोई नमकीन लेकर भाभी फिर आयीं।

असलम ने खाने के पहले सिर उठाया, पूरे साहस के साथ आँखें उठायीं और भाभी के चेहरे की ओर उड़ती नज़र डालकर सामने की दीवार पर की तस्वीर में अपनी आँखें अटका दीं।

असलम का हृदय कहीं से टूट-फूट गया। भाभी बहुत सुन्दर थीं, बहुत, उसकी कल्पना से भी अधिक। उसकी भाभी कोई बड़ी नहीं, एक अठारह-बीस बरस की लड़की थी। असलम को प्रसन्नता नहीं हुई। उसे भाभी का सुन्दर होना ज़रा भी अच्छा न लगा। उसने रहमान भाई की ओर देखा।

रहमान पैंतीस-चालीस बरस का ढीले-ढाले जिस्म का आदमी है। क़द छोटा है। रंग गहरा साँवला है और आँखें हमेशा ही लाल बनी रहती हैं। अस्सी रुपयों का फ़ारेस्टर, जो जंगल-जंगल भटकता है, गाँव-गाँव की खाक छानता है और बदले में पीपों चावल, मुर्ग़ियाँ और

शराब मिलती है। वह गाँव की पहाड़ी, भोली, नंगे जिस्म वाली लड़कियों को फँसाता है....उसी रहमान ने आज एक अठारह-बीस बरस की लड़की से शादी की है....और उस लड़की ने इस बेमेल विवाह की कोई शिकायत किये बग़ैर उसका कमरा सजाया है, तस्वीरें लगायी हैं, पलंग बिछाया है....उसने इस मोटे जिस्म वाले रहमान के बीड़ी से काले पड़े ओंठों को....

भाभी पान लेकर आयीं तो असलम ने एक पान मुँह में रखा, फिर उन्हें आदाब किये बिना ही, एक बार रहमान की ओर देखकर हँसा और बाहर निकल आया।

*

दो महीने बाद असलम कालेज चला आया। चाहे भाभी में संकोच रहा हो या असलम में, असलम दो महीनों में भी भाभी से घुल-मिल न सका। जब कभी भी भाभी असलम के घर आयी, असलम अपने कमरे से बाहर नहीं निकला।

जब दीवाली की छुट्टियों में असलम घर आया तो उन दिनों भाभी असलम के घर पर ही थीं। रहमान भाई का ट्रान्सफ़र बस्तर के दक्षिण एक जंगली तहसील बीजापुर में हो गया था। रहमान भाई ने भाभी को अपने साथ वहाँ ले जाना ठीक न समझा था।

नजमा पन्द्रह दिन पहले आपा के यहाँ चली गयी थी। उसके न होने से असलम को बड़ी उलझन हुई। स्वभाव से असलम लापरवाह था। नजमा ही घर में उसकी ज़रूरत की चीज़ों की चिन्ता रखती थी। वह सोच ही रहा था कि अब कैसे काम चलेगा कि भाभी ने स्वयं उसके अनजाने ही नजमा का पूरा काम सम्हाल लिया। असलम को अपने कमरे में पानी मिल जाता। उसकी किताबें यथास्थान जमा दी

जातीं। शेविंग-सेट ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती। पढ़ता-पढ़ता अगर वह सो जाता तो उसका चश्मा अलग करके केस में बन्द कर दिया जाता।

कुछ ही दिनों में असलम का संकोच मिट गया और फिर तो भाभी के आगे वह इस तरह खुल गया कि घण्टों बातें करने लगा, हँसने लगा, अपना दिल खोलने लगा....असलम के साथ मदरसे में कितनी लड़कियाँ पढ़ती थीं....उनमें ख़ातून कैसी थी....बेगम उससे कितना चिढ़ती थी....ज़हीरा कितनी बातें करती थी और रुख़साना ? उसकी ज़िन्दगी की वह पहली लड़की, जो उससे बेहद हमदर्दी रखती थी और उसकी झिड़कियाँ खाकर भी हँसती थी। असलम मौलवी साहब से पिट न जाय, इस डर से उसके अधूरे काम कर देती और सारी दूसरी लड़कियों की शिकायतें मोल लेती कि वह असलम-जैसे लड़के का काम करती है। पर असलम से नाराज़ होना शायद उसने सीखा ही नहीं था। और कभी-कभी पिटकर भी सुबह जब वह मदरसा आती तो किस तरह अपनी कापी में आम की सूखी खटाइयाँ छिपाकर असलम की ओर सरका देती थी।....ख़ातून-जैसी मग़रूर लड़की की शादी कितने मामूली से लड़के से हो गयी....बेगम ने एक मामूली पान वाले से कैसे रोमाँस लड़ाया....ज़हीरा की ज़िन्दगी कितनी दर्दनाक है....रुख़साना की शादी कितने अच्छे लड़के से हो गयी और आज उसके कितने बच्चे हैं।....

और एक दिन इन बातों का सिलसिला अचानक टूट गया। रहमान भाई भाभी को लेने आ गये और भाभी दो दिनों के बाद चली गयी।

लगभग एक हफ़्ते तक अकेले कमरे में किताबें चाटने के बाद असलम भी कालेज चला आया। छुट्टियाँ समाप्त हो गयी थीं।

*

कालेज में असलम को भाभी का एक ख़त मिला। लिखा था :

भाई असलम,

तस्लीम !

शायद तुम्हें उम्मीद न हो कि मैं तुम्हें ख़त लिखूँगी। पर आज जब मैं तुम्हें लिख रही हूँ तो ख़ुद भी यह नहीं समझ पा रही हूँ कि अचानक तुम्हें याद करने कैसे बैठ गयी हूँ। इसकी एक वजह शायद यह हो कि तुम्हारे पास से लौटने के बाद कुछ बातें मेरे ज़ेहन में अटक गयी हैं और उनका बोझ उठाना मेरे लिए मुश्किल हो रहा है। फिर सोचती हूँ, पता नहीं मैं वह सब लिख भी पाऊँगी या नहीं। अगर न लिख सकी तो मैं उस घड़ी का इन्तज़ार करूँगी, जब तुमसे रू-ब-रू बातें कर सकूँ। अबकी छुट्टियों में तुम बीजापुर ज़रूर आओ। हालाँकि ऐसी जगह में मेरा ख़ुद दम घुट रहा है, फिर भी मैं तुम्हें यहाँ बुला रही हूँ। यहाँ मुझे एक पल को चैन नहीं। चारों तरफ़ ऊँची-ऊँची पहाड़ियों और घाटियों से घिरी, उजाड़-सी यह तहसील है। गिने-चुने दस-पन्द्रह मकान हैं। यहाँ के लोग निपट जंगली हैं। ऐसे लोग मैंने अपनी ज़िन्दगी में कभी नहीं देखे थे। नंगे, अधनंगे और उजड्ड !

यहाँ हफ़्ते में दो-तीन ख़ून होते हैं। बाप बेटे को मार देता है। बीवी ख़ाविन्द को जान से मार डालने में नहीं हिचकती। माँ अपने बच्चे को मार डालती है, यह भी सुना है। मुहब्बत किसे कहते हैं, शायद ये लोग नहीं जानते। सोचती हूँ, ऐसे माहौल में मैं कितने दिन रह पाऊँगी। कभी-कभी तो मुझे लगता है, असलम, जैसे मैंने कोई बहुत बड़ा गुनाह किया था, जिसकी सज़ा मुझे मिल रही है। उस औरत में, जो किसी का ख़ून करके कालेपानी की सज़ा भुगतती है, और मुझमें क्या फ़र्क़ है, बताओ तो ! यहाँ महीने में मैं लगभग २५ दिन अकेली ही रहती हूँ। वह दौरे पर रहते हैं। यहाँ अपनी तनहाई और बीती

बातों को लेकर परेशान होने के सिवाय मेरे पास क्या है ?

तुमने उस दिन शेर के बारे में, जो कि मेरी हर कापी, किताब और दीवार पर लिखा था, पूछा था, 'तुम्हें क्या यह ज़्यादा पसन्द है, भाभी ?' मैंने झूठमूठ ही सिर हिलाकर टालते हुए कहा था, 'नहीं तो, योंही लिख डाला है।' पर शायद तुम्हें मेरी बात का एतबार नहीं आया था और तुमने हँसते हुए कहा था कि जो बात बार-बार हमारे दिमाग़ में गूँजती है, उसे ही हम जाने और अनजाने में काग़ज़ों पर, दीवारों पर या जहाँ कहीं भी हुआ, लिख दिया करते हैं। तुम्हारा अन्दाज़ ग़लत नहीं था। शायद वे कुछ अशआर, जो मैंने लिख छोड़े हैं, मेरे जज़्बात की तर्जुमानी करते हों।....तुम जब मेरे पास आओगे तो....

तुम्हारी लापरवाही देखकर ही एक दिन मैंने तुमसे तुम्हारी शादी के बारे में बात करते हुए कहा था कि पता नहीं तुम्हें ऐसी बीवी मिल भी पाती है या नहीं, जो तुम्हें सम्हाल सके। उसके जवाब में तुमने हँसकर कहा था, 'जब तक तुम्हें मेरे-जैसी कोई लड़की नहीं मिलती, तुम शादी ही नहीं करोगे। इस पर पता नहीं मुझे क्या सूझा कि मैंने कह दिया था, 'क्यों असलम, तुम मुझे ही तो नहीं चाहते ?' और तुम्हारा चेहरा उतर गया था, तुम पीले पड़ गये थे। तब माफ़ी माँगकर मैंने अपनी बात लौटा ली थी। उस वक्त शायद तुमने सोचा होगा कि मैं कितनी ओछी हूँ, है न ? पर मैं तुमसे केवल एक सवाल पूछूँगी, अपनी सारी बातें खोलकर रख देने के बाद मेरा तुमसे केवल एक ही सवाल होगा, तुम्हें मेरे-जैसी लड़की अब भी चाहिए क्या ? यदि चाहिए तो मैं उससे ही तुम्हारी शादी करा दूँगी।

नहीं, असलम, तुम मत कहना कि तुम्हें मेरे-जैसी ही लड़की चाहिए और कोई नहीं ! तुम्हें तो पहली बहार की पहली सुबह की मासूम

कली चाहिए। और आयशा—मैं? एक जनाज़े का फूल, जिसकी सुर्ख़ी किरनों की परियों ने छीन ली, जिसके दामन के शबनम बादलों ने पी लिये और जिसे मुर्दे के कफ़न पर रख दिया गया है। मेरी महक कफ़न के लिए और ख़ूबसूरती जनाज़े के लिए है, जिसे धूल भी मिलेगी तो क़ब्रिस्तान की!

ख़ैर, इन सब बातों को जाने दो। तुम मुझे ख़बर करो कि तुम कब आ रहे हो। ज़्यादा क्या लिखूँ। शायद ख़त लम्बा हो गया।

तुम्हारी भाभी
आयशा

पत्र एक ओर रखकर असलम चारपाई पर लेट गया। शाम गहरी होने लगी थी और कमरे में अँधेरा फैलने लगा था। उसने आँखें बन्द कर लीं।....अगली छुट्टियाँ सात महीने बाद मिलेंगी, सात महीने तक हर दिन भाभी की ये बातें उसके दिमाग़ में गूँजेंगी। वह व्याकुल हो-होकर उस दिन की प्रतीक्षा करेगा, जब भाभी मिलेंगी और शायद फिर पूछेंगी, अब भी तुम्हें मेरे-जैसी लड़की चाहिए?

इसी समय असलम का साथी विजय कमरे में आया और लाइट जलाकर कपड़े बदलने लगा। बाज़ू वाले कमरे में दो-तीन फ़ोर्थ ईयर के लड़के किसी नीरस विषय पर बहस कर रहे थे। बरामदे में से खेल-कर लौटे लड़के शोर मचा रहे थे। विजय ने पास आकर असलम की पेशानी छुई और मीठे स्वर में कहा, "क्या अच्छा नहीं लग रहा है?"

असलम उठ बैठा। पेशानी पर रखी विजय की हथेली छूकर उसने कहा, "विजू, कल मैं जा रहा हूँ।"

"क्यों, कहाँ?"

"घर। शायद दस-पन्द्रह दिन में लौटूँगा। मेरी छुट्टी की अर्ज़ी दे देना।"

"क्या कोई बीमार है ?"

"आँ....हाँ। मेरी भाभी बीमार है।"

विजय ने तब आश्वासन दिलाया कि वह बिलकुल निश्चिन्त होकर चला चाय, अर्ज़ी दे देगा।

विजय के जाने के बाद असलम फिर लेट गया।....घाटियों और पहाड़ियों से घिरा बीजापुर, जहाँ जंगली लोग रहते हैं, एक दूसरे का ख़ून करते हैं और शराब पीकर नाचते हैं....

करवट बदलकर उसने आँखें मूँद लीं।

*

जब असलम बीजापुर पहुँचा तो रात के ग्यारह बज रहे थे। अँधेरी रात ऊँची-ऊँची पहाड़ियों को अपने आग़ोश में लिये गहरी घाटियों में सो रही थी। चारों ओर फैले गम्भीर और डरावने सन्नाटे में झींगुरों का स्वर गूँज रहा था। असलम को लगा, जैसे अफ्रीका के किसी जंगल में उसे उतार दिया गया हो। अपने एक हम-सफ़र से, जो उसके साथ ही बीजापुर में उतर रहा था, उसने पूछा था तो उस आदमी ने हँसकर बताया था कि वह बीजापुर में पिछले सात बरसों से रह रहा है और बीजापुर के कण-कण से परिचित है।

होलडाल और सूटकेस हाथ में लिये असलम उतर पड़ा। साथ के आदमी के पास बहुत-सा सामान था। उसके सामान देखकर असलम ने अनुमान लगाया कि वह कोई टुटपुँजिया व्यापारी है, जो शहर से सामान लाकर बीजापुर में दुगुने-तिगुने दाम वसूल करता है और जंगल में पैसों की इमारत खड़ी करता है।

उस अँधेरी रात में केवल दो मुसाफ़िरों को उतारकर गाड़ी जब सन्नाटे को चीरती खो गयी तो उस सुनसान-से वातावरण में एक

स्वर गूँजा और धीरे-धीरे घटता-घटता डूब गया। असलम ने अन्धकार में डूबे बीजापुर पर आँखें दौड़ायीं। कुछ नहीं, केवल काला-काला पर्दा।....यहाँ के लोग जंगली हैं, ये लोग प्यार-मुहब्बत नहीं जानते हफ़्ते में दो-तीन खून कोई बड़ी बात नहीं।....असलम सिहर उठा

साथ वाले आदमी ने अपने चारों ओर सामान लादकर असलम से पूछा, "क्यों, चलेंगे नहीं क्या?"

असलम ने होलडाल उठाया और चल पड़ा। रास्ते में उस व्यक्ति ने असलम से पूरी जानकरी ले ली कि वह किसके यहाँ आया है, क्यों आया है और कब तक लौटेगा। जब तक कि रहमान भाई का क्वार्टर नहीं आ गया, साथी पहले बीजापुर, उसके लोगों, उनके रहन-सहन के बारे में और फिर अपने व्यापार के बारे में बताता रहा। उसने यह भी बताया कि रहमान साहब को भी वह सामान देता है।

जब क्वार्टर आया तो उस व्यक्ति ने विदा ली। असलम ने तकलीफ़ के लिए उससे माफ़ी माँगी और क्वार्टर की ओर बढ़ा। कोई दस मिनट तक दरवाज़ा खटखटाने के बाद दरवाज़ा खुला, उनींदी आँखें मलती, हाथ में लालटेन लिये भाभी आयीं और हैरत में आकर कहा, "अरे, असलम!"

असलम ने भाभी को आदाब नहीं किया। वैसे ही हँस पड़ा। भाभी ने हँसते हुए असलम के हाथ से होलडाल लेकर कहा, "अन्दर आओ, आने की खबर तक नहीं दी?"

अन्दर आकर असलम ने पाँव के जूते खोले। फिर चारपाई पर लेटकर उसने पूछा, "भाई साहब कहाँ हैं?"

"दौरे पर," भाभी ने कहा, "महीने में क़रीब पचीस दिन दौरे पर ही रहना पड़ता है।"

"तुम अकेली रहती हो?"

"नौकरानी है।"

और फिर असलम के मना करते रहने पर भी भाभी ने उसका मुँह-हाथ धुलवाया, उसके लिए बिस्तर लगाया और लेट रहने के लिए कहा और खुद उस आधी रात को आग सुलगाने लगीं, हालाँकि असलम ने बार-बार कहा कि वह रास्ते में खाना खा चुका है और उसे अब बिलकुल भूख नहीं, पर भाभी ने उसकी एक न सुनी।

कुछ देर असलम लेटा रहा, फिर बावर्चीखाने में भाभी के पास जा बैठा। भाभी रोटी बनाती हुई बीजापुर की बहुत सारी बातें बताती रहीं कि पहले उसके भाई दौरे पर जाते थे तो वह कितना डरती थी, यहाँ के नंग-धड़ंग लोगों की अजीब-सी बोली सुनकर उसे कितना भय लगता था और उनके आने पर वह कितना रोती थी कि किसी दिन वह यहाँ अकेले में मर जायगी और उन्हें पता भी नहीं लग पायगा।....

रोटी खाकर जब असलम चारपाई पर आया तो बाहर बारिश होने लगी। भयानक गरज के साथ बूँदें पड़ रही थीं। हवा बर्फ़ की तरह ठण्डी हो गयी। असलम ठण्ड से ठिठुरने लगा।

अपने बिस्तर पर लेटकर भाभी ने कहा, "दो बज चुके। मालूम होता है, आज रात-भर बारिश होगी। तुम्हारे भाई साहब का लिहाफ़ है, दूँ क्या? सर्दी तेज़ हो गयी है।

लेकिन असलम ने इन्कार कर दिया। बाहर बारिश तेज़ हो गयी और हवा के झोंके दीवारों और छप्परों पर पछाड़ खाने लगे।

*

दूसरी शाम को भाभी ने नहाकर सफ़ेद धुली साड़ी पहनी और बालों में कंघी करते हुए कहा, "यहाँ नज़दीक ही एक बड़ा ख़ूबसूरत झरना है, चलो, हम तुम्हें दिखा लायें।"

असलम ने आश्चर्य से भाभी की ओर देखा।

भाभी हँसकर बोलीं, "सोचते होगे, मैं कैसे निकलूँगी, क्यों? यहाँ देहात में पर्दा कैसा, असलम? मैं यहाँ पर्दा नहीं करती। जब वह होते हैं तो अक्सर उनके साथ मैं झरने पर जाती हूँ।"

असलम कपड़े बदलकर भाभी के साथ निकल पड़ा। झुकती हुई शाम के धुँधले साये में ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ जैसे धुन्ध में डूबी थीं। रंगीन जंगली फूलों, ऊँचे मोटे दरख़्तों और दुबली-पतली लताओं से चिमटकर नशीली घाटियाँ कोयल के स्वर में कूक रही थीं और परिन्दों की बोलियों में चहक रही थीं।

उस झरने की मासूम बूँदें कितनी शोख़ थीं! उसके इर्द-गिर्द की काई कितनी सब्ज़ और गहरी थी। आयशा ने चट्टान पर बैठकर सामने के झरने पर अपनी आँखें फैला दीं। असलम एक पत्थर पर जमी काई पर उँगलियाँ फेरने लगा। आसमान के सीने में बादल के रेशमी टुकड़े तैर रहे थे और चमगादड़ों की लम्बी और ख़त्म न होने वाली क़तार उड़ी जा रही थी।

आयशा आकर असलम के निकट बैठ गयी। आयशा के जिस्म की, साफ़-धुली साड़ी की, टायलेट-साबुन की एक बेखुद बना देने वाली खुशबू असलम की साँसों में बसने लगी। वह कुछ पल लगातार आयशा की ओर देखता रहा। फिर सामने के झरने पर आँखें जमाकर बोला—

'हाय ये शाम ये झरने ये शफ़क़ की लाली
मैं इन आसूदा फिज़ाओं में ज़रा झूम न लूँ
वो दबे पाँव उधर कौन चली आती है
बढ़के उस शोख़ के तर्शे हुए लब चूम न लूँ।'

आयशा ने चौंककर पूछा, "किसका शेर है?"

"साहिर का। आयशा भाभी, तुमने शायद साहिर नहीं पढ़ा?"

आयशा जवाब न दे सकी। सामने की ओर चुपचाप ताकती वह कुछ सोच रही थी। शफ़क़ की लाली घटने लगी थी और दूधिया झरने के रेशमी शबाब में धुँधलके की मटमैली स्याही की हल्की-हल्की परत सरक रही थी। हौले-हौले फिसलने वाली शाम के साये में दरख़्तों पर परिन्दों का शोर बढ़ गया और चमगादड़ों की क़तार ख़त्म हो गयी। कहीं बहुत आगे कोई जंगल जल रहा था, उससे उठकर रक्तिम लपटें दूर-दूर तक दिखायी दे रही थीं। असलम ने कहा, "साहिर का एक शेर मैं बहुत पसन्द करता हूँ।"

"कौन-सा ?"

"हयात इक मुस्तक़िल ग़म के सिवा कुछ भी नहीं शायद,
ख़ुशी भी याद आती है तो आँसू बन के आती है।"

आयशा थोड़ी देर तक असलम की ओर देखती रही, फिर सहसा असलम का हाथ पकड़कर बोली, "असलम, यह शेर मेरे लिए कह रहे हो क्या ?"

'नहीं तो, भाभी,' असलम ने चौंककर कहना चाहा, पर कुछ कहने के पहले ही आयशा के आँसू छलक आये और वह उन्हें छिपाने की कोशिश करती हुई बोली, "चलो वापस चलें !"

रास्ते में असलम ने चुपचाप चल रही आयशा को देखकर बोलने का साहस नहीं किया।

घर पहुँचकर असलम से बिना कुछ बोले आयशा अपने कमरे में चली गयी। बाहर अँधेरा गहरा हो गया। बादल घिर आये और ठण्डी हवा चलने लगी।

असलम आयशा के निकट आकर चारपाई पर बैठ गया और स्नेह-भरे स्वर में बोला, "भाभी !"

आयशा पेट के बल लेटी थी और उसका मुँह तकियों में छिपा

था। असलम की बात का जवाब दिये बिना ही आयशा चुप पड़ी रही तो असलम ने झिझकते हुए आयशा की पीठ पर अपना हाथ रखकर कहा, "भाभी, मुझसे खफ़ा हो ?"

आयशा ने पलटकर सहसा अपना चेहरा असलम की हथेली में छिपा लिया और रोने लगी। असलम कुछ पल हतबुद्धि-सा देखता रहा, फिर थरथराते स्वर में बोला, "भाभी तुम्हें क्या हो गया ?"

भाभी ने आँसुओं में भीगा अपना चेहरा उठाया और कड़ुवे स्वर में बोली, "असलम, तुम बीजापुर क्या लेने आये हो ? तुम्हें इतनी जल्दी भागे-भागे आने के लिए तो मैंने नहीं लिखा था। तुम क्यों मेरे सोये ज़ख्म कुरेदने की कोशिश करते हो ?"

असलम हतप्रभ-सा आयशा की ओर देखने लगा।

आयशा का चेहरा सुर्ख हो गया था। वह कहती गयी—

"तुम क्यों मेरी ज़िन्दगी का राज़ जानना चाहते हो असलम ? क्या इसलिए कि तुम मुझसे नफ़रत कर सको ? तो लो, सुन लो, मैं कोई अच्छी लड़की नहीं। शादी के पहले मैं हमीद से प्यार करती थी। हमीद मेरा खालाज़ाद भाई है। उसके और मेरे सम्बन्ध.... इस शादी के पहले ही मैंने अपने को उसके हवाले कर दिया था।....

असलम जैसे एक चोट खाकर तिलमिलाकर उठ खड़ा हुआ और घृणा से उस लड़की की ओर देखकर तीखे स्वर में बोला, "ज़रा ठहरो, मुझे भी कुछ कह लेने दो। इस तरह तुम्हारा खत पाते ही चले आने के लिए मैं क्यों मजबूर था....इसे बताना मैं ज़रूरी नहीं समझता।....मैं तुम्हारे ज़ख्म नहीं कुरेदता, तुम आप ही अपने ज़ख्म नंगे करके मुझे दिखा रही हो। तुम्हारी ज़िन्दगी के किसी राज़ से मेरा कोई मतलब नहीं।.... शायद मैं कल ही चला जाऊँगा।" और असलम तीर की

तरह कमरे से निकल आया।

*

अगली सुबह असलम जल्दी ही उठकर जाने की तैयारी में जुट गया। होलडाल बाँधकर, गीले कपड़े वैसे ही सूटकेस में ठूँस लिये और कपड़े बदल लिये। रसोई-घर से आयशा की आहट मिल रही थी। नौकरानी चाय लेकर आयी तो उसने चाय पीने से इन्कार कर दिया, फिर भी वह चाय की प्याली मेज़ पर रख गयी। गुस्से में असलम ने चाय की प्याली उठाकर खिड़की के बाहर फेंक दी। होलडाल और सूटकेस उठाकर जब वह बरामदे तक आया तो सहसा पास वाले कमरे से आयशा निकली और असलम की बाँह छूकर पाँवों तक झुक गयी। असलम घबराकर पीछे हट गया और भाभी को उठाने की कोशिश करता हुआ बोला, "छीः, भाभी ! यह क्या करती हो ? आयशा ने असलम के पाँवों पर अपना सिर रख दिया और रोती हुई बोली, "मैं कल पागल हो गयी थी !"

असलम ने झुककर आयशा को उठाया और अपने भीतर बरबस उमड़ उठती किसी लहर को रोककर आयशा की ओर देखने लगा।

भरे कण्ठ से आयशा ने कहा, "मैं अपने मुँह से माफ़ी माँगूँ, यह मुश्किल है। पर तुम यों नहीं जा सकोगे।"

असलम के भीतर का तूफ़ान तेज़ हो उठा और बार-बार गले तक कुछ आकर रुकने लगा। भाभी ने सूटकेस असलम के हाथ से ले लिया और असलम ने आयशा से आँखें बचाते हुए होलडाल रखा और खिड़की से बाहर देखने लगा।

रात को अपने काम से निबटकर आयशा असलम के कमरे में आयी और उसकी चारपाई पर बैठते हुए बोली, "आज मैं जो-कुछ भी तुमसे कहूँगी, उसमें न तो कोरे जज़बात होंगे और न ही कोई गढ़ी हुई बात।

इसलिए तुम टोकना मत। मैं वह सब तुमसे कहूँगी, जिसे कहने के लिए मैं बेचैन थी।....न, न, तुम मुझे मत रोको। आज आयशा कल की तरह पागल नहीं है। कल मैंने कहा था न, असलम, कि मैं शादी के पहले हमीद से प्यार करती थी।...."

वह एक पल को चुप हो गयी और फिर सामने देखकर कहने लगी, "हमीद मेरा खालाज़ाद भाई था। हम सब इकट्ठे एक ही घर में रहते थे। उन दिनों जब मुल्क का बटवारा हुआ और यहाँ भगदड़ मच गयी तो अब्बा ने भी नौकरी छोड़, ज़मीन-जायदाद बेच दी और हम सब हैदराबाद चले गये। पर जो हमने सोचा था, वैसा न हुआ और हमें फिर लौटना पड़ा। मगर यहाँ अब क्या था? नौकरी छूट चुकी थी, ज़मीन-ज़ायदाद सब चली गयी थी, सिर पर साया तक न था। इसलिए हम लोग खाला के घर रहने लगे।

"मैं तब तेरह साल की थी। उस वक्त मैं इतनी शरमीली थी कि लड़के तो लड़के, दो-तीन लड़कियों के आगे भी बोल सकने की हिम्मत मुझमें नहीं थी। हमीद मेरी खाला का छोटा लड़का था, जो उन दिनों पढ़ता था। वह बड़ा ही शोख और नटखट था। आज मुझे बड़ा ताज्जुब होता है कि सोलह साल की उम्र में ही वह प्यार-मुहब्बत की इतनी सारी बातें कैसे जान गया था। मैं तो प्यार-मुहब्बत कुछ नहीं समझती थी। उसी ने धीरे-धीरे मेरे दिल में भी...."

असलम के चेहरे से आँखें हटाकर भाभी खिड़की के बाहर अँधेरे में देखने लगीं। पर्दे को हिलाती हुई बाहर की काले बरसाती मेघ में भीगी ठण्डी हवा कमरे में फैल गयी। मेज़ पर रखे लैम्प की लौ एक बार सिहरकर हिल उठी। कमरे में फैली रोशनी का दायरा एक बार सिमटकर फैला और फैलकर सिमट गया। मसहरी की नाज़ुक और महीन जाली एक बार काँपी और थम गयी। भाभी का महीन

दुपट्टा सिर से सरका कि असलम ने आगे झुककर कुहनियाँ घुटनों पर टिका, अपनी हथेलियों के बीच में ठोड़ी रखकर कहा, "फिर, भाभी ?"

"फिर ठीक याद नहीं। आज इतना ही कह सकती हूँ कि मैं हमीद को प्यार करने लगी। आज सोचती हूँ तो अपने से पूछती हूँ कि सचमुच मैं हमीद को चाहने लगी थी ? हाँ कहने को मन नहीं करता। मुझे अब लगता है कि हमीद की जगह यूसुफ़, रशीद, वहीद, कोई भी होता तो भी शायद मैं वैसा ही करती और उस हालत में फिर हमीद सारे जहान का हुस्न लेकर भी आता तो भी मेरा प्यार नहीं छीन पाता। जो-कुछ भी हुआ, उसके लिए न तो मैं हमीद को दोषी ठहराऊँगी, न अपने को। मैं झूठमूठ ही ऐसा समझती रही कि मैं हमीद को प्यार करने लगी हूँ, हालाँकि प्यार के माने मुझे तब भी मालूम नहीं थे। हमीद ऊपर के कमरे में सोता था और मैं बरामदे में, जिसमें ऊपर जाने की सीढ़ियाँ थीं। हमीद ने मुझे बुलाया और मैं चली गयी।...."

ठण्डी हवा का एक झोंका आया और दरवाज़े पर धक्का मारकर लौट गया। दरवाज़े के पल्ले खुल गये और खिड़कियाँ खुलकर बन्द हो गयीं।

आयशा ने उठकर खिड़की का पर्दा खींचा, दरवाज़े का पल्ला भिड़ाया और साँकल चढ़ाती हुई बोली, "तुम किसे दोषी मानोगे, मैं नहीं जानती। जानना भी नहीं चाहूँगी। उसके कुछ दिन बाद तुम्हारे भाई साहब का शादी का पैग़ाम आया और मैं तुम्हारी भाभी बनकर आ गयी।"

असलम ने पूछा, "और हमीद, भाभी ?"

आयशा कुछ पलों के लिए चुप रही। लैम्प का साया उसके चेहरे के आधे भाग में पड़ रहा था, जिसमें कुछ गीलेपन की चमक थी। हमीद की ओर देखकर आयशा बोली, "वह कहीं चला गया और फिर नहीं

लौटा। लोग कहते हैं कि वह शराब पीने लगा था और आवारा हो गया था।"

"अब ?"

"अब ?" आयशा करुण स्वर में बोली, "अब वह नहीं रहा।" उसका सिर झुक गया और आँखें भारी हो गयीं। बाहर से ठण्डी हवा का एक झोंका लैम्प की लौ को फिर हिला गया।

असलम ने उठकर दरवाज़े के पल्ले लगा दिये।

आयशा बोली, "हमीद की मौत का मुझे कोई ग़म नहीं, असलम! जो बात मुझे रात-दिन बेचैन किये रहती है, वह यह है कि मैं तुम्हारे भाई साहब के साथ पूरी वफ़ादारी नहीं बरत पाती, गो कि आज मेरे दिल व दिमाग़ में सिर्फ़ वही हैं, भले वह मोटे हों, बदशकल हों, शराब पीते हों और पहाड़ी लड़कियों को फँसाते हों।"

आयशा चुप हो गयी तो असलम लेट गया और अपने पैरों पर शाल डाल ली। हू-हू करती हवा आयी और दरवाज़े पर फिर धक्का मारकर लौट गयी। आयशा तनिक झुककर, शाल को असलम के सीने तक खींचकर, उसके बालों में हाथ फेरने लगी। फिर सहसा स्नेह-सिक्त स्वर में बोली, "एक सवाल पूछती हूँ। क्या अब भी तुम मेरे ही जैसी लड़की से ब्याह करना चाहोगे ?"

असलम चारपाई पर अपने ऊपर झुकी उस नारी को देखने लगा और थोड़ी देर तक देखता रहा। उसकी नाक में आयशा के जिस्म की मीठी खुशबू भरकर अन्दर फैलने लगी थी। असलम ने अपनी आँखें मूँद लीं और धीमे स्वर से कहा, "इसका जवाब मैं अभी नहीं दे सकता भाभी।"

बाहर आसमान के एक कोने में बिजली की एक रेखा काँपी, बादल गरजे और बारिश होने लगी। आयशा उठकर अपनी चारपाई

पर चली गयी।

*

घाटी के दूसरे मोड़ पर जब गाड़ी आयी तो असलम ने सिर निकालकर बाहर देखा। दूर-दूर तक फैले खेतों में हरी-हरी लहरें फैल-सिमट रही थीं। घने-घने पेड़ों की क़तारें और दूर दिखायी देती पहाड़ियाँ धुन्ध में डूबी सुरमई बादलों के गले लिपट रही थीं। उधर घाटियों के बीच एक उजले पानी का छोटा-सा झरना पत्थरों के सीने को तोड़कर बह रहा था। उसके इर्द-गिर्द गन्धहीन नीले-पीले फूल की पखुंड़ियाँ हसीन दिख रही थीं।

असलम ने अपनी आँखें पहाड़ियों के अंचल पर जमा दीं। इन्हीं पहाड़ियों और घाटियों से घिरी आयशा रहमान भाई के साथ रहती है। इन्हीं बादलों को वह रोज़ देखती है, अपनी भावनाओं में डूबी वह दीवानी लड़की, जो शादी के पहले हमीद से प्रेम करती थी और शादी के बाद....

असलम नाटकीय ढंग से हँसा।

पर वह तो किसी से भी प्यार नहीं करता। आयशा से भी नहीं, नजमा से भी नहीं....

उतार पर गाड़ी दौड़ने लगी। पीछे पहाड़ी, घाटियाँ, रहमान, आयशा और पहाड़ी झरने सब छूट गये। असलम ने अपना चेहरा सामने की ओर कर लिया। तेज़ हवा से असलम के लम्बे-लम्बे बाल बिखर गये और एक सर्द कँपकँपी उसके सीने में भर गयी। उसने अपने गर्म कोट के कालर ऊपर किये, ठण्डी हो रही कनपटियाँ उनमें छिपायीं और पीछे की सीट से टिककर सामने की रेंगती-भागती ज़मीन को देखने लगा।

* * *